कश्मीर की आदि संत कवयित्री लल्लद्यद व एकत्व की अवधारणा

-डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट

प्रस्तावना- वितस्ता घाटी कई दृष्टियों से आकर्षण एवं विश्लेषण का केंद्र रही है। यह भूमि न केवल आध्यात्म, दर्शन तथा चिंतन की साक्षी रही है अपितु यहाँ प्राकृतिक सौन्दर्य की अद्वितीय, अतुलनीय छटा भी दृष्टिगत होती है। यहाँ विश्व की प्राचीनतम भाषा के आदि विद्वान, भाषाविद्, आचार्यों की परंपरा रही हैं। वास्तव में यह धरती भारतीय काव्य-शास्त्र की जन्मभूमि है। अतः यहाँ संत कवियों, ऋषियों, मुनियों और सूफियों ने जन्म लिया है। तदनुसार यहाँ की सामाजिक व्यवस्था एवं सांस्कृतिक धरोहर इन महात्माओं से प्रभावित रही है। निश्चित रूप से इनकी वाणी और उपदेशों ने समता, समानता, एकता, सद्भावना और शिष्टाचार का संचार किया है।

चौदहवीं शताब्दी के आरम्भ में बौद्ध धर्म और हिन्दुओं के त्रिक-दर्शन से कश्मीर की जीवन-पद्धति निर्मित हुई थी। उसका इस्लामी विचारधारा के साथ तीव्र संघर्ष भी हुआ। एक ओर जहाँ प्राचीन विश्वास, आस्थाएँ और परम्पराएँ थीं दूसरी ओर इस्लाम के नवीन दर्शन का प्रदार्पण हो रहा था। सामान्य जन इन दोनों मतों के बीच उलझ रहा था, अस्थिरता तथा अव्यवस्था की ओर समाज जा रहा था। इस संवेदनशील समय में कई पथ-प्रदर्शकों ने अपनी महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वाह किया है जिनमें संत कवयित्री रूपभवान, ललद्यद और हब्बा खातून का नाम उल्लेखनीय है। इस आलेख में ललेश्वरी के वाखों का विवेचन-विश्लेषण किया जाएगा और एकात्मवाद की अवधारणा के विभिन्न आयामों की व्याख्या की जाएगी।

बीज शब्द- कश्मीरी संस्कृति, एकत्व, शैव-दर्शन, त्रिक-दर्शन, शिष्टाचार, सामाजिकता, वाख, समता, समानता, सम्मानता

मूल आलेख- ललद्यद चौदहवीं सदी की एक सशक्त शैव दर्शन भक्ति परंपरा की एक महत्वपूर्ण कवयित्री रही हैं। ललद्यद के जन्म स्थान के सम्बन्ध में मतभेद अवश्य है परन्तु इसमें कोई संदेह नहीं है कि उनका जन्म एक ब्राहमण तथा संपन्न कश्मीरी परिवार में हुआ है। बाल्यकाल से ही उनका धार्मिक स्वभाव था तथा एकांत में समय व्यतीत करना उनको अच्छा लगता था। अल्पायु में उनका विवाह हुआ, ससुराल में उन्हें भले ही पदमावती नाम से पुकारा जाता था परन्तु वहाँ उन्हें ऐसी कोई विशेष सुख-सुविधा नहीं थी जो एक आदर्श जीवन यापन के लिए अपेक्षित होती है। क्रूरता, निर्दयता और कठोरता उनके जीवन में सर्वव्याप्त थी। 'निलवठ' को एक उदहारण के रूप में देखा जा सकता है जो अत्यधिक चर्चा का विषय रहा है। ललेश्वरी के खाने के बरतन में उसकी सास एक नीला पत्थर रखती थी जिसे कश्मीरी में 'निलवठ' कहते है 'निल' का अर्थ होता है 'नीला' और 'वठ' का अर्थ होता है 'पत्थर'। उसी नीलवठ के ऊपर वह उसे थोडा सा खाना बिखरा कर डाल देती थी ताकि जब घर के अन्य सदस्य देखे तो उन्हें यह आभास हो कि ललद्यद सबसे अधिक खाना खाती है परन्तु

वास्तविकता यह थी कि वह कभी भी पेट भर खाना नहीं खाती थी। उसमें इतनी सहनशीलता थी कि वह यह सब अत्याचार किसी से कहे बिना सहती थी यहाँ तक कि वह उस नीलवठ को अंत में धोकर उसी बरतन में रख देती थी। जब कभी वह अपनी व्यथा का बखान करती थी तो केवल काव्य के माध्यम से ही करती थी जैसे जब उसके ससुराल में अनेक तरह का खाना बनाया जाता था तो ललद्यद की सखियाँ उसे पूछती थी कि आज क्या-क्या खाया? वह काव्य रूप में उन्हें उत्तर देती थी जो उसकी सखियों की समझ से परे था जैसे:

"होंड मारिथ, होस मारिथ
ललि नीलवठ चलि न ज़ंह"[1]

अर्थात् कितने भी पकवान क्यों न बने ललद्यद के भाग्य में नीला पत्थर ही होता है।

ललद्यद न केवल पति के द्वारा तिरस्कृत व अपमानित होती थी अपितु उसके ससुराल जन भी कोई कोर-कसर बाकी नहीं रखते थे। जिसका उदहारण इस पंक्ति से भी समझा जा सकता है-

"यि ओस लल्य हियुन्द ताबय
नोट फुट आब रूद इस्तादय"[2]

ऐसा कहा जाता है कि एक बार ललद्यद पनघट से मिट्टी के बर्तन में (नोट) में पानी ला रही थी, उसके पति ने पानी से भरी हुई मटकी पर कंकड मारे जिसके कारण मटकी टूट जाती है। पानी धरती पर गिरने के बजाय उसके कन्धे पर जम जाता है। इस घटना ने न केवल लल का पति चकित किया अपितु उनके रहस्यमयी व्यकितत्व का भेद भी लोगों के समक्ष खुल जाता है। इस घटना के उपरान्त ही ललद्यद ने अपना ससुराल त्याग दिया। अतः वर्षों तक ससुराल के अत्याचार सहने के बाद उन्होंने अपना जीवन जंगलों में व्यतीत करना शुरू किया। ईश्वर में उन्हें पहले ही प्रगाड़ आस्था थी, ससुराल से तटस्थ होने के बाद वह पूर्ण रूप से ईश्वर, भक्ति में लीन हो गई। यहीं से ललद्यद के जीवन की वास्तविक यात्रा आरंभ हुई।

ललद्यद के जीवन से सम्बंधित कई लोक-कथाएँ प्रचलित है। वह एक ऐसी संत कवयित्री थी जिसके बारे में जितना भी सुना और कहा जाए वह आश्चर्य में डाल देता है जैसे उन के संबंध में यह घटना आज भी बहुत प्रचलित व लोकप्रिय है कि ससुराल से पलायन करने के बाद ललद्यद एक बार कहीं से जा रही थी कि उनकी नज़र दूर से आ रहे हज़रत अमीर कबीर मीर सयिद अली हमदानी (र .अ) पर पड़ी और उन्हें देखकर लल्ला खुद को छुपाने के लिए जगह तलाश कर रही थी, कहीं जगह नहीं मिली तो उसने अंगारों से भरी भट्ठी में छलांग मार दी। आश्चर्य की बात यह थी कि वह वहाँ जल-बुनकर नहीं अपितु एक सुन्दर वस्त्र पहनकर निकली| भट्ठी में कूदने का कारण पूछने पर उसका कहना था कि 'मैंने अपने जीवन में पहली बार किसी सिद्ध पुरुष को देखा और उनके सामने मैं ऐसी अवस्था में कैसे जाती।'[3]

ललद्यद एक प्रसिद्ध कश्मीरी भाषा की भक्त कवियत्री थी जो कश्मीर शैव भक्ति परम्परा की पहली तथा महत्वपूर्ण कडी रही है। इनकी काव्य शैली को वाख (vaakh) कहा जाता है। उनके वाखों में उनकी अनेक मान्यताओं की व्याख्या की गई है। वह न मूर्ति-पूजा पर विश्वास करती थी और न अन्धविश्वास पर श्रद्धा रखती थी। वह कुरीतियों तथा परंपरागत रीति-रिवाजों के विरुद्ध थीं। वह साधना की उस अवस्था पर पहुंच चुकी थीं जहाँ हिन्दू और मुसलिम दोनों एक थे। उन्होंने विभिन्न जातियों को एक सूत्र में बांधने का भी प्रयास अपने वाखों के माध्यम से किया है।

ललद्यद ने अपने वाखों के माध्यम से ईश्वर के एक होने तथा उसे अपने भीतर टटोलने पर बल दिया है उनका कहना था कि ईश्वर केवल हमे अपने भीतर अपनी आत्मा में ही प्राप्त हो सकता है, उनका कहना है-

"शिव छुय थलि थलि रोज़ान
मंव जान हियोंद तअ मुसलमान।
तव्य छुख न पनुन पान परज़ान
सुय छय सहिब्स ज़ानी ज़ान" ।।[4]

अर्थात् ईश्वर तो कण-कण में है, तेरे भीतर है, अगर उसे पाना ही है तो अपने भीतर से पा, बाहर अपना समय व्यर्थ मत कर।

ललेश्वरी अपने युग की प्रबल समाज सुधारक व एकत्व दर्शन की प्रतिपादक थी। उन्होंने सामाजिक भेद-भाव, रूढ़ीवाद तथा जातिभेद का सदैव विरोध किया है। उनके समक्ष ब्राह्मण और शूद्र में कोई अंतर नहीं है, ऊँच और नींच का कोई शब्द नहीं है। वह खंडन-मंडन प्रणाली की प्रथम कश्मीरी कवयित्री भी थी। ब्राह्मणों को संबोधित करते हुए ललेश्वरी कहती है कि 'हे ब्राह्मण| तू अपने आपको पहचान। तू तो एक है। वास्तविकता की जान-पहचान तुमको कभी नहीं हुई, पढ़ते-लिखते तुम्हारा हाथ और तुम्हारी उंगलियाँ घिस गई परन्तु भीतर जो द्वैत भाव है, वह कभी भी नष्ट नहीं हुआ।'[5]

ललद्यद ने अपने वाखों के माध्यम से हिन्दू तथा मुस्लमान की एकता आपसी भाईचारे पर भी बल दिया है। उनका कहना था कि जब सूरज सब को रोशनी देता है, सब को मिलता है। इन सब में कोई भेद-भाव नहीं तो तुम धर्म तथा जाति, ऊँच तथा नीच का भेद-भाव क्यों करते हो। ईश्वर सब का एक ही है जब ईश्वर ने किसी को नहीं बाँटा तो तुम मनुष्य कौन होते हो बाँटने वाले।

"थल-थल में बसता है शिव ही,
भेद न कर, क्या हिन्दू-मुसलमान।
ज्ञानी है तो स्वयं को जान,
यही है साहिब से पहचान ।।"[6]

ललद्यद के समीप अल्लाह और ईश्वर एक हैं, इसलिए वह कट्टर मुल्लाओं के भ्रमजाल के ताने-बाने काट कर मनोजगत में जीवन रहस्य का निर्देश देती हैं। पूजा, पाठ, मंदिर-मस्जिद, तीर्थ खानकाह आदि धर्म के दिखावे मात्र है, इन से ज्ञान और बोध के गन्तव्य शायद ही मिल सकें। ललद्यद का स्वयं यह कहना है कि मैंने भी ईश्वर को पाने के लिए व्यर्थ में कई प्रयत्न किए-

"लल बो द्रायेस लोलरे
छानडान लुसुम दिन क्योह राथ।
वुछुम पंडित पननी गरे
सुय मय रोट्मस न्यचतुर त साथ ।।"[7]

ललेश्वरी कहती है कि ईश्वर को अंत में मैंने अपने भीतर ही पाया और मोह माया ऊँच-नीच को त्याग कर मैं उनमें मिल गई।

निष्कर्ष- वस्तुतः एकात्म तथा एकत्व का पाठ पढ़ाने वाली आध्यामिक संत कवयित्री ललद्यद कश्मीर की सामाजिकता व संस्कृति की एक जीवंत और सशक्त कड़ी रही है। उन्होंने उस समय में कश्मीरी जनता का मार्गदर्शन किया जब अव्यवस्था, अस्थिरता तथा आस्था-अनास्था तथा मोहभंग की स्थिति थी। डॉ. ब्रिज प्रेमी 'कश्मीर: कुछ सांस्कृतिक पहलू' नामक पुस्तक में कहते है कि-"ललद्यद अपने पीछे कोई चिह्न छोड़े बिना स्वर्ग वासी हो गई।"[8] वर्तमान समाज में जहाँ लोग समाधियों, मज़ारों, मठों आदि को अपार महत्व देते है वहाँ आश्चर्य की बात यह है कि ललद्यद की अन्तिम विश्रामस्थली पर एक साधारण समाधि निर्मित की गई। लल एक जीवन्त और अमर सत्य है और कश्मीर को इनके मंगलदायक व्यक्तित्व का सदा गर्व रहेगा।

संदर्भ ग्रन्थ-सूची

1 प्रो. जय लाल कोल, ललद्यद , पृ. 331

2 जवाहार लाल बट्ट, ललद्यद, पृ. 179

3 विकिपीडिया.org , लल्लेश्वर ,23 May 2024.

4 जवाहार लाल बट्ट,लल्ल द्यद पृ. 159

5 जवाहार लाल बट्ट,लल्ल द्यद पृ. 116

6 Hindi Wikipedia.org, लल्लेश्वरी, 7 feb 2017.

7 वही पृ 59

8 कश्मीर कुछ सांस्कृतिक पहलू ,डॉ .ब्रिज प्रेमी पृ .63

-डॉ. मुदस्सिर अहमद भट्ट